ISSN: 2584-0231(Online)
International Journal of Multidisciplinary Research in Arts, Science and Technology
© IJMRAST | Vol. 3 | Issue 10 | October 2025
Available online at: https://ijmrast.com
DOI: https://doi.org/10.61778/ijmrast.v3i10.197

डॉ भीमराव अंबेडकर का सामाजिक न्याय का सिद्धांत

डॉ. संजय भारद्वाज

एसोसिएट प्रोफेसर, पोलिटिकल साइंस, राजकीय महाविद्यालय, परबतसर
Email: peacecpf@gmail.com

सारांश

डॉ. भीमराव अंबेडकर का सामाजिक न्याय का सिद्धांत भारतीय समाज में समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व के सिद्धांतों पर आधारित है। उन्होंने जाति-व्यवस्था, अस्पृश्यता और सामाजिक असमानताओं के विरुद्ध आजीवन संघर्ष किया। अंबेडकर के अनुसार, वास्तविक लोकतंत्र तभी संभव है जब समाज के सभी वर्गों को समान अवसर और अधिकार प्राप्त हों। उनके विचारों में सामाजिक न्याय केवल कानूनी अधिकारों की प्राप्ति नहीं है, बल्कि यह मानवीय गरिमा, समान भागीदारी और आत्मसम्मान की स्थापना का माध्यम है। संविधान निर्माण में उनकी भूमिका ने भारत को सामाजिक न्याय का संवैधानिक ढांचा प्रदान किया, जो आज भी प्रासंगिक है। डॉ. अंबेडकर का यह सिद्धांत न केवल दलितों के उत्थान का प्रतीक है, बल्कि सम्पूर्ण मानवता के लिए समानता और न्याय का संदेश देता है।

मुख्य शब्द : डॉ. भीमराव अंबेडकर, सामाजिक न्याय, समानता, स्वतंत्रता, बंधुत्व, लोकतंत्र, मानवाधिकार, जाति-उन्मूलन, संवैधानिक न्याय, दलित उत्थान।

I: प्रस्तावना (Introduction):

भारत एक बहुरंगी और बहुधर्मी देश है जहाँ विभिन्न जातियों, धर्मों, भाषाओं और संस्कृतियों का सह-अस्तित्व इसकी पहचान है। किंतु इस विविधता के पीछे सदियों से चली आ रही सामाजिक असमानता, भेदभाव और विषमता की गहरी जड़ें भी विद्यमान रही हैं। समाज की इस विषम संरचना ने एक बड़े वर्ग को शिक्षा, सम्मान और समान अवसरों से वंचित रखा। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने इसी अन्यायपूर्ण व्यवस्था के विरुद्ध अपने जीवन का प्रत्येक क्षण समर्पित किया। उन्होंने समाज के उस वर्ग के लिए आवाज़ उठाई जिसे इतिहास ने मौन कर दिया था। डॉ. अंबेडकर का सामाजिक न्याय का सिद्धांत भारतीय लोकतंत्र की आत्मा है, क्योंकि उन्होंने यह स्पष्ट किया कि जब तक समाज के प्रत्येक व्यक्ति को समान अवसर, सम्मान और अधिकार नहीं मिलते, तब तक स्वतंत्रता का कोई वास्तविक अर्थ नहीं है। उन्होंने कहा था—"समानता के बिना स्वतंत्रता निरर्थक है।" यह विचार केवल एक राजनीतिक कथन नहीं, बल्कि सामाजिक क्रांति का घोषणापत्र था। डॉ. अंबेडकर का उद्देश्य केवल दलितों या पिछड़े वर्गों का उत्थान नहीं था, बल्कि सम्पूर्ण भारतीय समाज में एक ऐसी मानवीय व्यवस्था की स्थापना करना था जिसमें किसी व्यक्ति के साथ जाति,

धर्म, लिंग या आर्थिक स्थिति के आधार पर भेदभाव न हो। उन्होंने भारतीय संविधान के माध्यम से न्याय, समानता और बंधुत्व को राष्ट्र की आधारशिला बनाया। इस प्रकार, डॉ.अंबेडकर का सामाजिक न्याय का सिद्धांत केवल एक राजनीतिक दर्शन नहीं, बल्कि एक नैतिक और मानवीय आंदोलन था, जिसने भारत को आधुनिक, समावेशी और संवेदनशील समाज की दिशा में अग्रसर किया।

II: सामाजिक न्याय की अवधारणा:

सामाजिक न्याय की अवधारणा पर चर्चा से पूर्व न्याय की अवधारणा को समझना आवश्यक है। आम जीवन में जैसी करनी वैसी भरनी और पूर्व जन्म के कर्मों के फल के रूप में न्याय समझ गया है, जबकि शासक वर्ग न्याय को अपने हितों के अनुरूप परिभाषित करता आया है। प्राचीन काल में न्याय शब्द का प्रयोग सामान्यतः पवित्रता के समानार्थक रूप में प्रयुक्त होता था। न्याय में सर्वांगीण सद्गुण समाहित थे तथा यह स्वीकृत नैतिक आचरण की व्यवस्था के पूर्णतया अनुरूप था,[1] जबकि आधुनिक न्याय शास्त्र में न्याय का अर्थ सामाजिक जीवन की उसे अवस्था से है जिसमें व्यक्ति का आचरण का समाज के व्यापक कल्याण के साथ समन्वय स्थापित किया गया हो। [2]

प्राचीन काल से विकसित होती इस न्याय की अवधारणा से आधुनिक काल में सामाजिक न्याय का सिद्धांत विकसित हुआ। वस्तुतः प्रेस के अविष्कार, औद्योगिकीकरण, विज्ञान तथा लोकतंत्र के विकास ने आम आदमी के लिए ज्ञान तथा चिंतन के नवीन द्वार खोल दिए। कालांतर में साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद ने व्यापार के साथ-साथ विचारों के आदान-प्रदान को गति प्रदान की। इन सभी परिवर्तनों की परिणाम स्वरुप न्याय की परिभाषा स्थानीय तथा क्षेत्रीय सीमा से बाहर निकलकर विश्व व्यापी हो गई, यद्यपि सामाजिक न्याय की अवधारणा 19वीं सदी से ही समाजवादी चिंतन के केंद्र में रही लेकिन 20 वीं सदी के सातवें दशक में रॉल्स की रचना ए थ्योरी ऑफ जस्टिस 1971 के साथ ही यह पुनः गंभीर चर्चा तथा विवादों के केंद्र में आई। इस रचना को सिडविक और मिल के पश्चात अंग्रेजी भाषा भाषी दार्शनिकों की परंपरा में सर्वाधिक महत्वपूर्ण दिन माना गया। रॉल्स के अनुसार जिस प्रकार सत्य चिंतन का प्रथम सद्गुण है, उसी प्रकार न्याय सामाजिक संस्थाओं का सद्गुण है [3]। यदि रॉल्स का न्याय का सिद्धांत काल्पनिक परिस्थितियों पर आधारित है तो अंबेडकर का न्याय यथार्थ जीवन में विद्यमान असमानता और शोषण के विरुद्ध विद्रोह से उपजा है।

III: डॉ. अंबेडकर का दृष्टिकोण और उनके योगदान:

भारतीय समाज की संरचना में दलित वर्ग में जन्म लेने वाले डॉ. अंबेडकर को पारिवारिक परिवेश के अंतर्गत प्राप्त संस्कार तथा उच्च शिक्षा की प्राप्ति ने दलित वर्ग की दलित अवस्था के प्रति न केवल जागरूक किया अपितु इसकी आलोचना व समाप्ति के लिए शक्तियों के केंद्रीय प्रयास के लिए व्याकुल बना दिया। अपने अनुभव तथा अध्ययन के उपरांत अंबेडकर ने यह मान्यता स्थापित की की भारतीय समाज में व्याप्त सभी बुराइयों की जड़ जाति व्यवस्था है। जाति व्यवस्था को खत्म कर दिया जावे तो समाज में विद्यमान समस्त बुराइयों का अंत संभव है। जाति व्यवस्था, न्याय एवं समता के प्राकृतिक एवं प्रजातांत्रिक अधिकारों के विरुद्ध है। जाति व्यवस्था के पद सोपनीय क्रम में शिखर पर ब्राह्मण है, जो अपने निहित स्वार्थ के कारण यथा स्थिति बनाए रखना चाहते हैं। डॉ. अंबेडकर जानते थे कि हजारों सालों से पोषित जाति व्यवस्था को रातों-रात समाप्त नहीं किया जा सकता, इसके लिए हिंदुओं के मौलिक दृष्टिकोण में बदलाव लाना जरूरी था।

जाति ईट की दीवार जैसी कोई भौतिक स्थिति नहीं है जिसे गिरा दिया जाए अपितु यह एक विचार और मन की स्थिति है। जाति व्यवस्था के उन्मूलन के लिए अंबेडकर अंतर्जातीय सहभोज को जहां अपर्याप्त एवं सतही उपाय मानते थे, वही अंतरजातीय विवाह को वास्तविक उपचार मानते थे [4]। क्योंकि केवल रक्त मिश्रण ही स्वजन आत्मीय और मित्र होने का भाव पैदा कर सकता है।मित्रता, बंधुता एवं आत्मीयता का भाव प्रबल होने से परायपन की भावना समाप्त होकर व्यक्तियों में अपनेपन की भावना पैदा होगी, जिसमें उच्च नीच तथा अस्पृश्यता को समाप्त कर सामाजिक विज्ञान की स्थापना भी की जा सकती है।

किसी व्यक्ति को उसके किसी जाति विशेष में जन्म लेने के कारण अस्पृश्य घोषित कर उसे समस्त मानवीय अधिकारों से पूर्णतया पृथक और बहिष्कृत करने की अमानवीय, अन्यायपूर्ण तथा अत्याचार पर आधारित छुआछूत प्रथा का उदाहरण भारतीय समाज में है। सदियों से प्रचलित इस प्रथा के कारण हिंदू समाज के एक बहुत बड़े हिस्से को वंचित कर दिया गया था। ऐसे वर्ग की पीड़ा और वेदना को स्वर डॉ अंबेडकर ने दिया। ऐसा स्वर जिसकी प्रतिध्वनि ब्रिटिश सत्ता के गलियारों से लेकर दीन दलित की झोपड़ी तक सुनाई दी। उन्होंने अछूत अवस्था को भाग्य या प्रारब्ध कर्मों का फल मानने से इनकार करते हुए इस व्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। भारतीय समाज में विद्यमान अस्पृश्यता जैसी क्रूर, बरबर तथा आततायी प्रथा को समाप्त कर वे समानता और स्वतंत्रता पर आधारित समाज की स्थापना करना चाहते थे। उनका मानना था कि यदि अन्याय की पोषक जाति व्यवस्था तथा अस्पृश्यता को समाप्त करना है, तो इनकी औचित्य को सिद्ध करने वाले हिंदू धर्म शास्त्रों की सार्वभौमिकता को नष्ट कर हिंदू धर्म की पुर्नव्याख्या करना अनिवार्य है, क्योंकि औसत जाति प्रथा अस्पृश्यता का पालन इसलिए किया जाता है कि वह इसे अपने धर्म के अनुरूप मानते हैं। इसलिए इन धर्मशास्त्र की मान्यता को समाप्त किए बिना हिंदू समाज में प्रजातांत्रिक सिद्धांतों, स्वतंत्रता और समानता की स्थापना नहीं की जा सकती है। डॉ. अंबेडकर ने हिंदू धर्म शास्त्रों के सुधार के लिए सुझाव दिया था कि हिंदू धर्म का केवल प्रामाणिक ग्रंथ होना चाहिए। वेदों, शास्त्रों तथा पुराण जैसी अन्य धार्मिक पुस्तकों को पवित्र तथा प्रामाणिक नहीं माना जाए तथा इनमें निर्देशित किसी भी धार्मिक सामाजिक सिद्धांत का पालन दंडनीय अपराध होना चाहिए। पुरोहित के व्यवसाय का वंशानुगत आधार समाप्त कर इसे स्वतंत्र रूप से व्यक्ति की इच्छा पर छोड़ दिया जाए तथा पुरोहित का पद प्राप्त करने के लिए एक परीक्षा उत्तीर्ण करना अनिवार्य हो। इसे पुरोहिताई के लिए सनद प्रदान की जाए। पुरोहितों की संख्या सीमित हो तथा वह राज्य की विधि के नियंत्रण में हो। डॉ. अंबेडकर ब्राह्मणों के विरुद्ध न होकर ब्राह्मणवाद के खिलाफ थे, क्योंकि ब्राह्मणवाद के जहर ने हिंदुत्व को नष्ट कर दिया। यदि ब्राह्मणवाद को समाप्त करना है तो आप हिंदुत्व को बचाने में सफल हो सकते हैं।

अस्पृश्यता व जाति व्यवस्था के जन्म तथा विकास में सहायता देने वाले प्रथम कारकों परंपराओं तथा धर्म शास्त्रों की संपूर्ण समीक्षा के पश्चात डॉ. अंबेडकर का इन सब कारकों को समाप्त करके समानता पर आधारित वर्ग विहीन समाज की स्थापना का उद्देश्य था, किंतु कट्टर हिंदू तथा ब्राह्मणवाद में कोई वांछित परिवर्तन न पाकर उन्होंने धर्म परिवर्तन का रास्ता अपनाया। सदियों से दमित इस वर्ग में चेतना और आत्मविश्वास पैदा करने के लिए अंबेडकर शिक्षा का मार्ग अपनाना चाहते थे। वह औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा द्वारा दलित वर्ग में जागृति और आत्मबल पैदा करना चाहते थे। उनका मानना था कि

शिक्षा साक्षरता का नाम न होकर परिवर्तन का मार्ग है, जिसकी मदद से दस्त की जड़ों को काटकर सामान्य आर्थिक उन्नति एवं राजनीतिक स्वतंत्रता हासिल की जा सकती है। इन विचारों को फलीभूत करने के लिए 1928 में अंबेडकर ने भारतीय बहिष्कृत समाज शिक्षक प्रसार मंडल की स्थापना की [5]। उन्होंने पत्रकारिता तथा जनसभाओं के माध्यम से दलित वर्ग में जागृति लाने का प्रयास किया। इन प्रयासों के बावजूद डॉ. अंबेडकर जानते थे कि रूढ़िवादी हिंदू स्वेच्छा से दलितों को कभी भी हिंदू समाज के अंग में स्वीकार नहीं करेगा, इसलिए उन्होंने दलितोत्थान के लिए अन्य साधनों की अपेक्षा कानूनी अधिकारों एवं संरक्षण पर सर्वाधिक बोल दिया। दलित शोषण के विरुद्ध डॉ. अंबेडकर द्वारा लगाई गई गुहार के कारण पहली बार दलित प्रतिनिधि के रूप में भारतीय राजनीतिक गतिविधियों में प्रतिनिधित्व का अवसर प्राप्त हुआ। इस अवसर का प्रयोग करते हुए प्रथम गोलमेज सम्मेलन के दौरान दलित हित रक्षा के लिए डॉ. अंबेडकर द्वारा प्रस्तावित मार्ग में दलितों को नागरिक अधिकार, स्वतंत्रता, सहकारी सेवाएं एवं विधायिका, कार्यपालिका स्थान में आरक्षण मुख्य थी। यही नहीं आगे चलकर उन्होंने दलितों के लिए पृथक निर्वाचन की भी मांग की [6] जिसका गांधी जी के साथ तथा देश में प्रबल विरोध हुआ।

अंततः दलितों की पृथक निर्वाचन की मांग भले ही अस्वीकार हो गई हो, किंतु दलित को समानता, छुआछूत का अंत, सरकारी सेवा में आरक्षण जैसे अनेक प्रस्तावों को आजाद भारत की संविधान में शामिल कर लिया गया। डॉ. अंबेडकर का मानना था कि अस्पृश्यता धार्मिक व्यवस्था से बढ़कर एक अर्थव्यवस्था भी है जो दासता से बढ़कर है, क्योंकि दासता से मालिक अपने दास की मूल आवश्यकता रोटी, कपड़ा और रहने की मांग को पूरा करता है, परंतु अस्पृश्यता की व्यवस्था में स्वर्ण हिंदू अछूतों की किसी भी जिम्मेदारी का निर्वाह नहीं करता है। डॉ. अंबेडकर मानते है कि आर्थिक न्याय की स्थापना के लिए राज्य के नियंत्रण में औद्योगीकरण, मशीनीकरण तथा उत्पादन के साधनों का विकेंद्रीकरण करके सामाजिक न्याय की स्थापना की जा सकती है। दलितों के समान भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति भी दासों जैसी ही थी। डॉ. अंबेडकर मानते थे कि पुरातन पंथी हिंदू समाज स्वेच्छा से स्त्रियों को समानता का दर्जा नहीं देगा, अतः दलित के समान ही वे कानून द्वारा स्त्रियों के अधिकारों की रक्षा करना चाहते थे। इसी उद्देश्य से उन्होंने विधायिका में प्रस्तुत हिंदू कोड बिल में स्त्रियों को संपत्ति का अधिकार, तलाक का अधिकार, गोद लेने का अधिकार आदि लेकर आए। किंतु स्त्रियों की स्थिति में बदलाव के लिए क्रांतिकारी कानून पारित नहीं कर पाए। इसके बावजूद क्षमता मूलक समाज का पुनर्गठन उनके जीवन का अध्याय बना रहा और इसकी प्राप्ति के लिए उनका नारा था: एकता, शिक्षा, आंदोलन। उनका मानना था कि स्त्रियों के सहयोग के बिना एकता अर्थहीन है। स्त्रियों की शक्ति के बिना आंदोलन अधूरा है, वह समाज के सभी वंचित वर्गों दलित एवं स्त्री को स्वतंत्र भारत समाज में बराबरी का हक दिलाने को कृत संकल्प थे।

IV: सामाजिक न्याय के मूल तत्व (Fundamental Elements of Social Justice):

डॉ. भीमराव अंबेडकर के सामाजिक न्याय के सिद्धांत में ऐसे अनेक तत्व सम्मिलित हैं जो समाज को समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व की दिशा में अग्रसर करते हैं। सामाजिक न्याय केवल कानून या शासन की अवधारणा नहीं, बल्कि एक नैतिक और मानवीय दर्शन है जिसका उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति को सम्मान, अधिकार और अवसर की समानता प्रदान करना है। इसके मुख्य तत्व निम्नलिखित हैं—

- समानता

  समानता सामाजिक न्याय की प्रथम शर्त है। अंबेडकर का मानना था कि जब तक समाज में जाति, वर्ग, धर्म, लिंग या आर्थिक स्थिति के आधार पर भेदभाव रहेगा, तब तक न्याय की स्थापना असंभव है। उन्होंने समान अवसरों की व्यवस्था और भेदभावरहित समाज के निर्माण पर बल दिया।

- स्वतंत्रता

  स्वतंत्रता केवल राजनीतिक या आर्थिक नहीं, बल्कि विचार, आचरण और विश्वास की स्वतंत्रता भी होनी चाहिए। अंबेडकर ने कहा था कि हर व्यक्ति को अपनी सोच और जीवन जीने की स्वतंत्रता मिलनी चाहिए, तभी वह समाज के विकास में योगदान दे सकता है।

- बंधुत्व

  बंधुत्व का अर्थ है एक-दूसरे के प्रति सम्मान, सहयोग और सहानुभूति का भाव। अंबेडकर ने इसे लोकतंत्र की आत्मा बताया। उन्होंने कहा कि केवल कानून नहीं, बल्कि सामाजिक और मानवीय रिश्ते भी समाज को एकता और स्थिरता प्रदान करते हैं।

- मानव गरिमा

  सामाजिक न्याय का उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति की गरिमा की रक्षा करना है। अंबेडकर का मानना था कि जब तक समाज के अंतिम व्यक्ति को सम्मान और आत्मसम्मान का अधिकार नहीं मिलता, तब तक कोई भी व्यवस्था न्यायपूर्ण नहीं हो सकती।

- अवसर की समानता

  अंबेडकर ने शिक्षा, रोजगार और सामाजिक प्रतिष्ठा के क्षेत्रों में समान अवसरों की आवश्यकता पर बल दिया। उनके अनुसार, अवसरों की समानता से ही समाज में वास्तविक प्रगति और न्याय की स्थापना संभव है।

इस प्रकार, समानता, स्वतंत्रता, बंधुत्व, मानव गरिमा और अवसर की समानता — ये सभी सामाजिक न्याय के मूल स्तंभ हैं, जो न केवल भारतीय संविधान की नींव हैं, बल्कि एक न्यायपूर्ण, समतामूलक और मानवीय समाज के निर्माण की दिशा में मार्गदर्शक सिद्धांत भी हैं।

V: डॉ. भीमराव अंबेडकर के सामाजिक न्याय का सिद्धांत : दार्शनिक दृष्टिकोण

डॉ. भीमराव अंबेडकर के सामाजिक न्याय का सिद्धांत उनकी गहन दार्शनिक दृष्टि और मानवीय संवेदनाओं पर आधारित है। उनके विचारों में भारतीय बौद्ध दर्शन, आधुनिक लोकतांत्रिक आदर्शों और पश्चिमी तर्कशक्ति का अद्भुत समन्वय देखने को मिलता है। अंबेडकर ने बौद्ध धर्म से करुणा (Compassion), मैत्री (Friendship) और प्रज्ञा (Wisdom) के मूल सिद्धांतों को आत्मसात किया और इन्हें सामाजिक पुनर्गठन का आधार बनाया। उनके अनुसार समाज में न्याय तभी संभव है जब मनुष्य अपने भीतर करुणा और समानता का भाव विकसित करे। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि केवल आर्थिक या राजनीतिक परिवर्तन पर्याप्त नहीं हैं, बल्कि नैतिक और मानसिक परिवर्तन भी आवश्यक हैं। फ्रांसीसी क्रांति के *स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व* के आदर्शों ने उनके चिंतन को नई दिशा दी, जिन्हें उन्होंने भारतीय संदर्भ में पुनर्परिभाषित किया। अंबेडकर का मानना था कि जब तक समाज में जाति, ऊँच-नीच और भेदभाव की जड़ें बनी रहेंगी, तब तक लोकतंत्र

केवल एक दिखावा रहेगा। उन्होंने सामाजिक न्याय को भारतीय लोकतंत्र की आत्मा और उसके स्थायित्व की शर्त माना। शिक्षा, राजनीति और धर्म—तीनों क्षेत्रों में उन्होंने समानता और मानव गरिमा को सर्वोच्च स्थान दिया। उनके लिए सामाजिक न्याय केवल संवैधानिक प्रावधान नहीं था, बल्कि एक नैतिक आंदोलन था जो प्रत्येक व्यक्ति के सम्मान, अधिकार और स्वतंत्रता की रक्षा करता है। इस प्रकार, डॉ. अंबेडकर का सामाजिक न्याय का सिद्धांत भारतीय समाज को अधिक मानवीय, समतामूलक और न्यायपूर्ण दिशा में आगे बढ़ाने वाला एक सशक्त दार्शनिक आधार प्रस्तुत करता है।

VI: आधुनिक संदर्भ में प्रासंगिकता (Contemporary Relevance):

आज के वैश्वीकरण, उदारीकरण और तकनीकी प्रगति के युग में जहाँ मानव सभ्यता ने अभूतपूर्व विकास किया है, वहीं सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक असमानताएँ अब भी पूरी तरह समाप्त नहीं हुई हैं। जातिगत भेदभाव, लैंगिक असमानता, वर्गीय विषमता और सामाजिक बहिष्कार जैसे मुद्दे आज भी हमारे समाज की जड़ों में गहराई तक मौजूद हैं। ऐसे समय में डॉ. भीमराव अंबेडकर का सामाजिक न्याय का सिद्धांत और भी अधिक प्रासंगिक प्रतीत होता है। उनका यह विचार कि "सामाजिक न्याय के बिना लोकतंत्र केवल एक दिखावा है," आज की राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों पर गहन टिप्पणी प्रस्तुत करता है। अंबेडकर का संदेश केवल भारत तक सीमित नहीं रहा; उनके विचार विश्व स्तर पर मानवाधिकारों, सामाजिक समानता और गरिमा की स्थापना के लिए प्रेरणा स्रोत बन चुके हैं। आज जब विश्व के कई देश नस्लीय भेदभाव, आर्थिक असंतुलन और सामाजिक अन्याय जैसी चुनौतियों से जूझ रहे हैं, तब अंबेडकर का विचारधारा-आधारित दृष्टिकोण हमें अधिक संवेदनशील और न्यायसंगत व्यवस्था की ओर प्रेरित करता है। उनके सिद्धांत हमें यह सिखाते हैं कि प्रौद्योगिकी और आर्थिक विकास का कोई अर्थ नहीं यदि समाज में समानता, करुणा और मानवता का अभाव हो। इस प्रकार, डॉ. अंबेडकर के सामाजिक न्याय के सिद्धांत आज भी भारतीय लोकतंत्र की आत्मा और वैश्विक मानवता की दिशा दोनों को आलोकित कर रहे हैं।

VII: निष्कर्ष (Conclusion):

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि अंबेडकर ने संपूर्ण भारत की भावी तस्वीर के प्रमुख शिल्पकार की भूमिका निभाई तथा सामाजिक न्याय को व्यावहारिक धरातल पर लाने के लिए कानून अपनाने का रास्ता दिखाया। इस प्रकार सामाजिक न्याय की अलख जगा कर अंबेडकर ने भारतीय समाज में हजारों वर्षों से शोषित दलित मानवता की मुक्ति का मार्ग प्रशस्त कर समानता, स्वतंत्रता, भाईचारा तथा न्याय आधारित समाज निर्माण की परिकल्पना प्रस्तुत की। इस महत्वपूर्ण अवदान के लिए दलित वर्ग ही नहीं वरन संपूर्ण राष्ट्र भी उनका ऋणी रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ

[1]. इंटरनेशनल एनसाइक्लोपीडिया ऑफ़ सोशल साइंसेज, खंड 8, पृष्ठ 341

[2]. सुभाष कश्यप, विश्व प्रकाश गुप्त, राजनीतिक कोष, हिंदी मध्यम, निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली 2004 पृष्ट 210

[3]. नरेश दाधीच, जॉन रॉल्स का न्याय सिद्धांत, आविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर 2003 पृष्ठ 3

[4]. बाबासाहेब डॉक्टर अंबेडकर संपूर्ण वांग्मय, खंड एक, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय नई दिल्ली 1993 पृष्ट 90

[5]. धनंजय कौर, डॉक्टर बाबासाहेब आंबेडकर जीवन चरित्र, अनुवाद गजानन सुर्वे, पापुलर प्रकाशन, नई दिल्ली 2006 पृष्ठ 123

[6]. बीआर अंबेडकर, व्हाट कांग्रेस और गांधी हैव इन टू द अनटचेबल्स, ठक्कर एंड कंपनी लिमिटेड, बॉम्बे 1945 पृष्ठ 41

Cite this Article

डॉ. संजय भारद्वाज, "डॉ भीमराव अंबेडकर का सामाजिक न्याय का सिद्धांत", International Journal of Multidisciplinary Research in Arts, Science and Technology (IJMRAST), ISSN: 2584-0231, Volume 3, Issue 10, pp. 52-58, November 2025.

Journal URL: *https://ijmrast.com/*

DOI: *https://doi.org/10.61778/ijmrast.v3i10.197*

This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License.